International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 05-10-2019; Accepted: 07-11-2019; Published: 12-12-2019
Volume 1; Issue 2; 2019; Page No. 39-40

दलित साहित्य की सैद्धांतिकी और अम्बेडकर

संजय कुमार
पीएच.डी (प्रथम वर्ष) जे.एन.यू, नई दिल्ली, भारत

प्रस्तावना

दलित शब्द की व्युत्पति संस्कृत धातु 'दल' से हुई है, जिसका अर्थ होता है खंडित, फटना और रौंदा, कुचलना, दबाया हुआ, मसला हुआ, पदाक्रांत तथा हिन्दुओं में वे शुद्र जिन्हें अन्य जातियों के समान मानवाधिकार प्राप्त नहीं है। अंग्रेजी में दलित का सामानार्थी है 'डिप्रेस्ड'।[1]

'दलित' शब्द का अर्थ है–जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित, शोषित, सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, कुचला हुआ, विनिष्ट, मर्दित, पस्त–हिम्मत, हतोत्साहित, वंचित आदि।

डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन दलित शब्द की व्याख्या करते हुए कहते हैं– 'दलित वह है जिसे भारतीय संविधान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है।'[2]

कँवर भारती का मानना है कि 'दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है, जिसे कठोर और गंदे कार्य करने के लिय बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया है और जिस पर सछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की, वही और वही दलित है, और इसके अन्तर्गत वही जातियाँ आती है, जिन्हें अनुसूचित जातियाँ कहा जाता है।'[3]

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार "भारतीय समाज का ताना–बाना अभी जाति व्यवस्था पर आधारित है और भारतीय समाज के विभिन्न स्तरों पर परिवर्तन का निर्धारण भी जाति के आधार पर होता है। प्रत्येक हिंदू जिस जाति में जन्म लेता है उसकी वह जाति ही उसके धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और पारिवारिक जीवन का निर्धारण करती है। यह स्थिति माँ की गोद से लेकर मृत्यु की गोद तक रहती है। अम्बेडकर की अवधारणा गहरे चिंतन–मनन और शोध पर आधारित है। उनकी यह दृष्टि समानता, स्वतंत्रता और भाइचारे के सिद्धांत की आकांक्षा को ध्यान में रखते हुए व्यापक संदर्भों से जुड़ी है। उनका सम्पूर्ण चिंतन और आंदोलन समग्र मनुष्य और समाज के लिए था जिसमें दलित साहित्यांदोलन गहरे रूप से जुड़ा है।

दलित पैंथर आंदोलन के दौरान दलित शब्द की व्याप्ति स्त्री, आदिवासी, पिछड़े और अन्य उपेक्षित वंचित तक थी।"[4]

मोहनदास नैमिशराय के अनुसार "दलित शब्द मार्क्स प्रणीत सर्वहारा शब्द के लिए समानार्थी लगता है। लेकिन इन दोनों शब्दों में पर्याप्त भेद भी है। दलित की व्याप्ति अधिक तो सर्वहारा की सीमित। दलित के अन्तर्गत सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक शोषण का अर्न्तभाव होता है तो सर्वहारा केवल आर्थिक शोषण तक ही सीमित है। प्रत्येक दलित व्यक्ति सर्वहारा के अन्तर्गत आ सकता है, लेकिन प्रत्येक सर्वहारा को दलित कहने के लिए बाध्य नहीं हो सकते..... अर्थात् सर्वहारा की सीमाओं में आर्थिक विषमता का शिकार वर्ग आता है, जबकि दलित विशेष तौर पर सामाजिक विषमता का शिकार होता है।[5]

मराठी कवि नारायण सर्वे के अनुसार 'दलित शब्द की मिली–जुली परिभाषाएं हैं। उसका अर्थ केवल बौद्ध या पिछड़ी जातियाँ ही नहीं, समाज में जो भी पीड़ित हैं, वे दलित हैं।'[6]

मराठी दलित साहित्यकार डॉ. गंगाधर पानतावणे 'दलित' शब्द को व्याख्यायित करते हैं, 'दलित क्या है? दलित कोई जाति नहीं बल्कि परिवर्तन और क्रान्ति का प्रतीक है। दलित मानवतावाद में विश्वास करता है। परन्तु वह ईश्वर के अस्तित्व, पुनर्जन्म, आत्मा तथा उन कथित धार्मिक ग्रन्थों को अस्वीकार करता है, जो भेदभाव की शिक्षा देते हैं। वह भाग्य तथा धर्म की अवधारणाओं को भी अस्वीकार करता है। क्योंकि ये ही विचार उसको दासत्व का बोध कराते रहे हैं। वह इस देश में दबाए सताए हुए समाज का प्रतिनिधित्व करता है जो वर्षों से जानवर से भी बदतर जिंदगी जीने को अभिशप्त है। वह विरोध करता है एक बहुत सूझ–बूझ के साथ विकसित की गई हिन्दू सामाजिक–व्यवस्था का जिसने कि मानव के रूप में उसको कभी स्वीकार ही नहीं किया तथा मानवीया गरिमा का निरन्तर निरादर किया गया। जिसके मृत–प्राय शरीर को पीड़ा और वेदना का संत्रास झेलना पड़ा। यही अलगाववाद का बोध उन हजारों दलितों के पुनर्जागरण का अक्षम स्त्रोत है।[7]

दलित साहित्य का आरम्भ मूलतः मराठी से होता है। रैदास, कबीर, हीरा डोम, चांद गुरु आदि पृष्ठभूमि बनाते हैं। लेकिन बुनियादी आरम्भ अम्बेडकर के साथ होता है। किसी भी भाषा में दलित साहित्य अम्बेडकर से कटकर नहीं है।

'समकालीन साहित्य में दलित विमर्श' एक अनिवार्य उपस्थिति है आज के साहित्य में दलित को एक कैटेगरी के रूप में भी देखा जा रहा है। दलित साहित्य पर सत्ता का हस्तान्तरण, भारत–विभाजन, राजनीति, दलितों का धर्मान्तरण और बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर के प्रखर नेतृत्व जैसी घटनाओं का पर्याप्त प्रभाव पड़ा। दरअसल, लेखकीय चेतना का सामाजिक चेतना और राजनीतिक चेतना के साथ विशेष अन्तर्सम्बन्ध होता है। सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया जिन तर्कों, विचारों और स्थापनाओं का योगदान होता है, उससे ही लेखक में भी प्रेरणा आती है। राजनीति में डॉ. अम्बेडकर का प्रतिनिधित्व प्राप्त होने से साहित्य विचार में भी उन्हें प्रतिनिधित्व मिला है। आज दलित साहित्य का स्तर वही है; जो सामाजिक विभेद, वर्णव्यवस्था, जातीय शोषण, समाजिक संरचनात्मक अन्याय, शोषण और गैर समानता के विरुद्ध तैयार हुई विचार प्रक्रिया से निर्मित हुआ है। दलित चेतना में 'प्रतिकार' और विरोध का भाव मुख्य है, इसलिए दलित साहित्य भी इन भावों से जुड़ा हुआ है। इस साहित्य का प्रतिकार भी चेतना का संवाहक होना ही इसका सौन्दर्य है।

दलितों के दुख, उनकी दिक्कत, गुलाम सी स्थिति निर्धनता, अभाव और शोषण काव कलात्मक शैली या साहित्यक शिल्प में चित्रण करने वाला साहित्य ही दलित साहित्य है। कंवल भारती अपनी पुस्तक 'दलित

साहित्य की अवधारणा' में बड़ी साफगोई से यह सवाल पूछते हैं कि "क्या साहित्य का विभाजन जाति के आधार पर सम्भव है?"[8]
आगे अपनी बात पर खुद सहमति की मुहर लगाते हुए वे कहते हैं कि "वास्तविकता यह है कि साहित्य सिर्फ भाषा के आधार पर ही विभाजित नहीं है, बल्कि वह अनेकानेक वर्गों और विचारधाराओं में भी विभाजित है, इस्लाम ओर ईसाईवादी भी है, जैन और बौद्धवादी भी हैं वामपंथी और दक्षिणपंथी भी है। गाँधीवादी और लोहियावादी भी है। वह राष्ट्रवाद भी है और भूमण्डलीवादी भी है। फिर दलितवादी क्यों नहीं हो सकता?"[9]
अभी तक साहित्य का भाषाई आधार ही जनमानस में स्थापित रहा है। 'दलित साहित्य का केंद्र मनुष्य का भौतिक वास्तविक जीवन है।' यह साहित्य दलितों के शोषण का विरोध, कुरीतियों का नकार तथा उससे मुक्ति का उद्घोषक है। दलित कवि मलखान सिंह के शब्दों में –

"हमारी दाससा का सफर तुम्हारे जन्म से शुरू होता है,
और इसका अंत भी तुम्हारे अंत के साथ होगा.....।"[10]

दलित साहित्य के प्रेरणा स्त्रोत महात्मा बुद्ध, नाथ–सिद्ध, कबीर, रैदास, धन्ना, पीपा, ज्योतिबा फूले एवं अम्बेडकर इत्यादि है। डॉ. अम्बेडकर के महत्व पर प्रकाश डालते हुए डॉ. तुलसीराम कहते हैं– "बीसवीं सदी के तीसरे दशक में भारतीय राजनीति में बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर का उदय हुआ, अतः वर्तमान दलित राजनीति तथा साहित्य का जो भी रूप है, उसकी जड़ में डॉ. अम्बेडकर का संघर्ष आज भी खाद पानी की तरह काम आ रहा है।"[11]
दलित साहित्य वर्चस्व का नकार है और उसके मूल में डॉ. अम्बेडकर के विचार है। अम्बेडकर का पूरा जीवन कठिन संघर्ष की कहानी है। शुरुआती दिनों में अम्बेडकर को विश्वास था कि 'हिन्दू' सही रास्ते पर आ जायेंगे, इसलिए 25 सितम्बर, 1927 को महाड़ सत्याग्रह के अवसर पर उन्होंने कहा था कि " यदि हमें प्राणी और नागरिक के रूप में अधिकार नहीं मिलते है, तो हमें हमेशा के लिए इसी पतित अवस्था में रहना पड़ेगा। यदि हम समस्त हिंदूओं को केवल एक जाति में एकताबद्ध करने में सफल हो जाते हैं, तो वह सामान्यतः भारत राष्ट्र की विशेष रूप से हिंदू समुदाय की महान सेवा करेंगे। यह वर्तमान जातिभेद की हमारी साम्प्रदायिक और राष्ट्रीय दुर्बलता का मुख्य कारण है। हमारा आंदोलन सामान्यतः समानता, स्वतन्त्रता और बन्धुत्व के लिए है।"[12]
दलित साहित्य की तीन बुनियादी विशेषताएं हैं– वेदना की अभिव्यक्ति, दलितों के दर्द का दस्तावेजीकरण, नकार का संकल्प।
आज दलित साहित्य को अलगाववादी कहा जा रहा है फिर भी इस विमर्श में इतनी क्षमता है कि वह दलितों के साथ पिछड़ों, आदिवासियों, महिलाओं और अल्पसंख्यकों को अपने साथ लेकर चल सकता है। जैसे–जैसे समाज में जटिलता बढ़ेगी ठीक वैसे ही दलित साहित्य की गतिशीलता बढ़ेगी।
दलित साहित्य के केंद्र में मानव है। वह भाग्यवाद को नकारता है। वह अम्बेडकर से प्रेरणा लेकर सामाजिक व्यवस्था को नकारता है, जिससे सदियों तक उन्हें गुलाम बनाये रखा। उन्हें पशुओं से भी बद्तर जीवन जीने पर मजबूर किया। यह मानव और बौद्ध धर्म को महत्व प्रदान करता है।
दलित साहित्य बौद्ध धर्म को महत्व देने के कारण हिंसा में विश्वास नहीं करता। वह मानवता में विश्वास करता है। इसके केंद्र में मानव है। वह हर प्रकार के वर्चस्व के खिलाफ खड़ा है। वह वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था, साम्प्रदायिकता की कड़े शब्दों में निंदा करता है। उसमें समता, स्वतन्त्रता, एवं बन्धुत्व का भाव है। वह साहित्य में 'स्वानुभव' को महत्व देता है।
दलित साहित्य अपने मूल में अम्बेडकर के विचार लिए आगे बढ़ रहा है। उस पर जातिवादी या अलगाववादी होने का आरोप लगाना गलत है, लोग भूल जाते हैं कि गड्ढे को पाटने के लिए पहले उसे खोदना पड़ता है। अभय कुमार दुबे के अनुसार– "अम्बेडकर की रचनाओं का अनुशीलन किसी को भी इस निष्कर्ष तक पहुँचा सकता है कि बाबा साहब दलित होने की पहचान आधुनिक नागरिक समाज में विलीन होते हुए देखना चाहते थे। फिलहाल दलित पहचान को सुदृढ़ करने का दौर चल रहा है। ऐसा शायद इसलिए है कि कमरे से निकलने के लिए कुछ कदम कमरे में ही रखने पड़ते हैं।"[12]
हिन्दी साहित्य की पाश्चिमोन्मुखी प्रवृत्ति के सामने 'दलित साहित्य' एक संभावनापूर्ण चुनौती के रूप में खड़ा होगा, जो हिन्दी साहित्य की मुख्यधारा के संवदेनशील रचनाकारों को भी देश की व्यापक जनता से जुड़ने की प्रेरणा देगा।

सन्दर्भ सूची

1. दलित साहित्य (वार्षिकी) 2014, डॉ. जयप्रकाश कर्दम, सम्यक प्रकाशन, पृ.– 283
2. दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, ओमप्रकाश वाल्मीकि, राधाकृष्ण प्रकाशन, तीसरी आवृत्ति– 2009, पृ.– 13
3. वही, पृ.– 13
4. डॉ. अम्बेडेकर वाड्मय खण्ड 9, पृ.– 21–22
5. दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, ओमप्रकाश वाल्मीकि, राधाकृष्ण प्रकाशक, पृ.– 14
6. वही, पृ.– 15
7. उद्धत–अनटचेबल्स। वायसेज आफ द दलित लिबरेशन मूवमेंट, नई दिल्ली, 1986, एडिटर बरबरा आर.जोशी, पृ.– 79
8. दलित साहित्य की अवधारणा, कंवल भारती, बोधित्व प्रकाशन, 2006, संस्करण, प्र.– 13
9. वही, पृ.– 14
10. दलित निर्वाचित कविताएँ, कंवल भारती (सुनो ब्राह्मण–मलखान सिंह)
11. डॉ. अम्बेडकर एक पुर्नमूल्यांकन, कंवल भारती, बोधित्व प्रकाशन, 1997, पृ.– 95
12. डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय, कैलाशचंद्र सेठ व मोहनदास नेमिशराय, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, पृ.– 49